देश-देशांतर/द बिग पिक्चर: कर्नाटक चुनाव...राज्यपाल...मुख्यमंत्री...सुप्रीम कोर्ट...विश्वास मत...इस्तीफा

संदर्भ एवं पृष्ठभूमि

19 मई 2018 का दिन जिस वज़ह से देश-विदेश के मीडिया की सुर्खियाँ बना, वह था कर्नाटक में हुए विधानसभा चुनाव के बाद सरकार के गठन का मुद्दा। बंगलूरू की गलियों से लेकर दिल्ली में सत्ता के गलियारों तक तो यह मुद्दा गूँजा ही, साथ ही देश के सुप्रीम कोर्ट ने तीन साल बाद एक बार फिर से रात में अदालत के दरवाज़े खुलवा कर इस मामले पर अविलंब सुनवाई की। सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर होने वाले शक्तिपरीक्षण (विश्वास मत) से पहले ही शाम लगभग 4 बजे नवनियुक्त मुख्यमंत्री बी.एस. येदियुरप्पा ने इस्तीफा दे दिया। सदन में बहुमत परीक्षण की नौबत ही नहीं आई।

उल्लेखनीय है कि कर्नाटक में हाल ही में हुए विधानसभा चुनाव के बाद राजनीतिक उठा-पटक के बीच सबसे बड़ी पार्टी, लेकिन बहुमत से थोड़ा दूर रह गई बीजेपी के बी.एस. येदियुरप्पा को 17 मई की सुबह 9 बजे राज्यपाल वजुभाई वाला ने अपने विवेक के आधार पर फैसला लेते हुए मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाई थी।

बी.एस. येदियुरप्पा को शपथ लेने से रोकने के लिये कांग्रेस और जेडीएस ने 16 मई की रात 9 बजे के करीब सुप्रीम कोर्ट में अरजी दाखिल कर तुरंत सुनवाई करने की अपील की थी। जिसके बाद देर रात चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा ने अर्जी स्वीकार करते हुए तीन जजों जस्टिस ए.के. सीकरी, जस्टिस अशोक भूषण और जस्टिस एस.ए. बोबडे की विशेष पीठ गठित कर तत्काल सुनवाई का आदेश दिया था।

- बी.एस येद्दियुरप्पा को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाने का फैसला हो जाने के बाद कांग्रेस और जनता दल (एस) की ओर से अभिषेक मनु सिंघवी ने इस मामले में तुरंत सुनवाई की अपील की थी।
- भाजपा की ओर से पूर्व अटॉर्नी जनरल मुकुल रोहतगी ने कहा था कि संविधान के तहत राष्ट्रपति और राज्यपाल के फैसले को किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।
- कांग्रेस-जेडीएस की इस याचिका पर सुप्रीम कोर्ट ने रात 1.45 से लेकर सुबह लगभग 5.30 तक सुनवाई करते हुए बी.एस. येदियुरप्पा के मुख्यमंत्री के रूप में शपथ लेने पर रोक लगाने से तो इनकार कर दिया था, लेकिन भाजपा से वे समर्थन पत्र पेश करने के लिये कहा, जो राज्यपाल को सौंपे गए थे।
- इसके बाद 18 मई को जब इस मामले में आगे सुनवाई हुई तो सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया कि कर्नाटक विधानसभा में 19 मई की शाम 4 बजे बहुमत सिद्ध किया जाए, ताकि यह पता लगाया जा सके कि बीजेपी के नवनियुक्त मुख्यमंत्री बी.एस. येदियुरप्पा के पास राज्य में विधायकों का पर्याप्त संख्या-बल है या नहीं।

18 मई का घटनाक्रम

कर्नाटक के मुख्यमंत्री की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता मुकुल रोहतगी ने बहुमत साबित करने के लिये 21 मई तक का समय मांगा था, लेकिन पीठ ने इसे नहीं माना। उन्होंने कहा कि कम-से-कम एक सप्ताह का समय मिलना चाहिये, यह राज्यपाल का विशेषाधिकार है।

कांग्रेस की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता अभिषेक मनु सिंघवी ने दलील दी कि राज्यपाल बीजेपी को बहुमत सिद्ध करने का मौका कैसे दे सकते है, जबकि कांग्रेस-जेडीएस के पास पूरी संख्या है।

जेडीएस की ओर से दलील देते हुए वरिष्ठ अधिवक्ता कपिल सिब्बल ने कहा कि कांग्रेस के साथ जेडीएस भी जल्दी शक्तिपरीक्षण चाहती है और यह तुरंत होना चाहिये। हमारे पास हमारे सभी विधायकों के हस्ताक्षर वाला पत्र है। सरकार बनाने का निमंत्रण गठबंधन के साथ सबसे बड़ी पार्टी को मिलना चाहिये या पर्याप्त बहुमत वाली पार्टी को?

क्या कहा न्यायपीठ ने?

- पीठ के अध्यक्ष जस्टिस ए.के. सीकरी ने कहा कि एक तरफ कांग्रेस और जेडीएस ने राज्यपाल को बहुमत की संख्या का पत्र दिया है, दूसरी तरफ बी.एस. येदियुरप्पा का दावा है कि उनके पास बहुमत है। किस आधार पर राज्यपाल ने उन्हें गठबंधन के ऊपर वरीयता दी?
- इस पर कर्नाटक के मुख्यमंत्री की ओर से बताया गया कि राज्यपाल ने अपने विशेषाधिकार का इस्तेमाल किया है और उन्हें वस्तुस्थिति पता है। मुकुल रोहतगी ने सरकारिया आयोग का उल्लेख करते हुए कहा कि बी.एस. येदियुरप्पा को सदन में अपना बहुमत साबित करना है और यह राज्यपाल का विशेषाधिकार है।

- इस पर न्यायपीठ के अध्यक्ष ने कहा कि अगर स्पष्ट बहुमत होता तो कोई समस्या ही नहीं होती...अगर चुनाव-पूर्व गठबंधन होता तो भी स्थिति अलग होती...लेकिन चुनाव-पश्चात् गठबंधन से इसकी प्राथमिकता कम नज़र आती है। अगर दो पार्टियाँ अपने-अपने दावे कर रही हैं, तो राज्यपाल ने किस आधार पर फैसला किया?
- न्यायपीठ ने कहा कि या तो आप कानून के अनुसार चलें या फिर सदन में बहुमत परीक्षण हो...यह आपको चुनना है, लेकिन दूसरा विकल्प अधिक व्यावहारिक है। बेहतर तो यही है कि सदन को ही फैसला लेने दें और इसका सबसे अच्छा तरीका शक्ति परीक्षण (Floor Test) होगा।
- सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि बजाय इसके कि राज्यपाल द्वारा बी.एस. येदियुरप्पा को आमंत्रित करने के फैसले की वैधता पर सुनवाई हो, बेहतर यह होगा 19 मई को फ्लोर टेस्ट हो।
- सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्देश भी दिया था कि शक्ति परीक्षण से पहले सभी विधायक शपथ लेंगे, जिन्हें शपथ दिलाने के लिये अंतरिम विधानसभा स्पीकर (प्रो-टेम स्पीकर) चुना जाएगा।

प्रो-टेम स्पीकर पर भी हुआ विवाद

इसके बाद 18 मई को राज्यपाल वजुभाई वाला ने बीजेपी विधायक के.जी. बोपैया को प्रो-टेम स्पीकर यानी विधानसभा का अस्थायी अध्यक्ष नियुक्त किया, जिसका कांग्रेस और जेडीएस ने यह कहते हुए विरोध किया कि यह नियुक्ति नियमों के खिलाफ है, क्योंकि इस पद पर सदन के वरिष्ठतम सदस्य को ही नियुक्त किया जाता है। इस पर हुई सुनवाई के बाद सुप्रीम कोर्ट ने राज्यपाल द्वारा नियुक्त प्रो-टेम स्पीकर द्वारा ही शक्ति परीक्षण कराने का आदेश दिया, लेकिन अब इसका लाइव टेलीकास्ट होगा। कोर्ट ने कहा कि बहुमत परीक्षण में पारदर्शिता लाने के लिये लाइव टेलीकास्ट सबसे बेहतर विकल्प है। विधानसभा सचिव सदन की कार्रवाई रिकॉर्ड करके लाइव फीड प्रसारण के लिये स्थानीय चैनलों को देंगे।

- प्रो-टेम (Pro-tem) लैटिन शब्द प्रो टेम्पोर (Pro Tempore) का संक्षिप्त रूप है, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'कुछ समय के लिये।'
- परंपरागत रूप से प्रो-टेम स्पीकर को विधानसभा या लोकसभा के सदस्यों की आपसी सहमति के बाद ही नियुक्त किया जाता है।
- यह नवनिर्वाचित विधायकों को शपथ-ग्रहण कराता है और यह पूरा कार्यक्रम इसी की देखरेख में होता है।
- सदन में जब तक विधायक शपथ नहीं लेते, तब तक उनको सदन का हिस्सा नहीं माना जाता।
- प्रो-टेम स्पीकर का काम सदन का स्थायी स्पीकर चुने जाने तक उसके कार्य का निष्पादन करना होता है। यह एक अस्थायी पद है जो स्पीकर के चुने जाने के बाद स्वतः समाप्त हो जाता है।

नीतिगत फैसले लेने पर लगाई थी रोक

सुप्रीम कोर्ट ने बी.एस. येदियुरप्पा के फ्लोर टेस्ट से पहले कोई भी नीतिगत निर्णय न लेने का आदेश भी दिया था। न्यायपीठ ने कहा कि यह बहुत स्पष्ट है कि जब तक आप इस कोर्ट को संतुष्ट नहीं करते, तब तक आप कोई नियुक्ति नहीं कर सकते। कोर्ट की यह टिप्पणी विधानसभा में एंग्लो-इंडियन सदस्य के मनोनयन को लेकर थी, जिस बारे में मुख्यमंत्री ने 17 मई को फैसला लिया था।

सुप्रीम कोर्ट ने शक्ति परीक्षण के दौरान गुप्त मतदान कराने का बी.एस. येदियुरप्पा का अनुरोध खारिज करते हुए राज्य के पुलिस महानिदेशक को सभी विधायकों को सुरक्षा प्रदान करने का आदेश दिया था।

राम जेठमलानी ने भी दायर की याचिका

उपरोक्त याचिका के बाद वरिष्ठ अधिवक्ता राम जेठमलानी ने कर्नाटक में भाजपा को सरकार बनाने का आमंत्रण देने के राज्यपाल के फैसले के खिलाफ 17 मई को सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर कर इसे पद का दुरुपयोग बताते हुए कहा कि राज्यपाल का आदेश संवैधानिक शक्तियों का घोर दुरुपयोग है, इससे वह जिस पद पर विराजमान हैं उसकी मर्यादा को ठेस पहुँची है। वह किसी पार्टी के समर्थन या विरोध में न्यायालय नहीं आए हैं, बल्कि राज्यपाल ने जिस तरह से फैसला लिया है उससे वह आहत हुए हैं।

इस पर मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के नेतृत्व वाली पीठ ने तत्काल सुनवाई के लिये दायर की गई राम जेठमलानी की याचिका पर विचार किया और कहा कि 16-17 की रात मामले की सुनवाई करने वाली तीन सदस्यीय विशेष पीठ ही 18 मई को इस पर सुनवाई करेगी।

सुनवाई के बाद पीठ ने राज्यपाल के विवेकाधिकार के मुद्दे पर वरिष्ठ अधिवक्ता राम जेठमलानी की याचिका पर कहा कि इस पर बाद में फैसला लेंगे। राज्यपाल एक सर्वोच्च संवैधानिक संस्था है और उनके विवेकाधिकार का मुद्दा न्यायिक समीक्षा के दायरे में आएगा या नहीं इस पर सुनवाई दस हफ्ते बाद होगी।

(टीम दृष्टि इनपुट)

दरअसल, भाजपा इतने कम समय में शक्ति परीक्षण कराने के पक्ष में नहीं थी और उसने इसका विरोध भी किया, लेकिन हॉर्स ट्रेडिंग को रोकने के लिये सुप्रीम कोर्ट ने बहुमत साबित करने के लिये दिये गए 15 दिन के समय पर रोक लगा दी और 19 मई को ही शक्ति परीक्षण कराने का आदेश दिया।

क्या होती है हॉर्स ट्रेडिंग?

- जब चुनाव में किसी भी पार्टी को बहुमत नहीं मिलता, तब प्रश्न उठता है कि आखिर उस पार्टी की सरकार बनेगी कैसे, जो बहुमत अपने साथ होने का दावा करती है...और यहीं से शुरू होती है बहस राजनीतिक सौदेबाज़ी यानी 'हॉर्स-ट्रेडिंग' की। हॉर्स ट्रेडिंग का मतलब क्या होता है और राजनीति से

इसका आखिर क्या लेना-देना है?

- कैंब्रिज डिक्शनरी में इसका अर्थ, ऐसी अनौपचारिक बातचीत से है, जिसमें दो पार्टियां ऐसी संधि करती हैं जिसमें दोनों का फायदा हो। मैकमिलन डिक्शनरी में इसका मतलब कठिन और कभी-कभी उन लोगों के बीच बेईमान चर्चा है, जो किसी एक एग्रीमेंट पर पहुंचना चाह रहे हैं।
- दरअसल, हॉर्स ट्रेडिंग का मतलब 'घोड़ों की बिक्री' से है। लगभग 1820 के आसपास इंग्लैंड में जब घोड़ों के व्यापारी अच्छी नस्ल के घोड़ों की खरीद-फरोख्त करते थे और कुछ अच्छा पाने के लिये किसी तरह के जुगाड़ या चालाकी के लिये जो तकनीक अपनाते थे, उसे ही हॉर्स ट्रेडिंग कहा गया।
- यूं तो राजनीति में इस शब्द का कोई औचित्य नहीं होता, लेकिन पिछले कुछ समय में इसका इस्तेमाल बढ़ा है। पॉलिटिक्स में जब कोई पार्टी विपक्षी सदस्यों को लालच देकर अपने साथ मिलाने की कोशिश करती है तो इस खरीद-फरोख्त की पॉलिटिक्स को हॉर्स ट्रेडिंग कहा जाता है।
- जब राजनीति में नेता दल बदल करते हैं, या फिर किसी चालाकी के कारण कुछ ऐसा खेल रचा जाता है कि दूसरी पार्टी के नेता आपका समर्थन कर दें, तब राजनीति में इसे 'हॉर्स ट्रेडिंग' कहा जाता है।

(टीम दृष्टि इनपुट)

सरकार बदलने के साथ ही बदल जाते हैं राज्यपाल

- राज्यपालों की नियुक्ति और बर्खास्तगी क्या केवल राजनीतिक आधार पर होनी चाहिये?
- क्या लोकतांत्रिक संस्थाओं की मर्यादा की रक्षा के लिये कोई लक्ष्मण रेखा नहीं होनी चाहिये?
- कौन खींचेगा यह रेखा?
- यह रेखा खींच भी दी गई तो इसका पालन किया जाना कौन सुनिश्चित करेगा?

ये और कुछ ऐसे ही अन्य प्रश्न हैं जो राज्यपाल के पद के साथ लंबे समय से जुड़े हुए हैं और इनका हल तलाशने के लिये कई समितियों और आयोगों ने हजारों पेज भर दिये अपनी रिपोर्ट में, लेकिन इसका कोई समाधान अब तक सामने नहीं आया है। यह भी सच है कि राज्यपाल के पद का दुरुपयोग लगभग सभी सरकारों ने किया है।

राज्यपालों को लेकर संवैधानिक उपबंध

संविधान के अनुच्छेद 155 और अनुच्छेद 156 के अनुसार किसी राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है और वह "राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण करता है।" इसका तात्पर्य यह है कि यदि किसी राज्यपाल पर राष्ट्रपति का "प्रसाद" बना रहे तो वह राज्यपाल अपने पद पर 5 वर्ष की अवधि तक बना रह सकता है। चूँकि अनुच्छेद 74 के अनुसार राष्ट्रपति केंद्रीय मंत्रिमंडल की सहायता और सलाह के अनुसार कार्य करने के लिये बाध्य होता है, इसलिये व्यवहार में किसी राज्य के राज्यपाल की नियुक्त और उसे पद से हटाने का कार्य केंद्र सरकार ही करती है और "राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत" शब्दों का अर्थ केंद्र सरकार की इच्छा और प्रसन्नता से ही है।

सर्वोच्च न्यायालय की व्याख्या

1977 में जनता पार्टी की सरकार ने और 2004 में यूपीए-1 सरकार ने राज्यपालों को बड़े पैमाने पर बर्खास्त किया था। 2004 में की गई बर्खास्तगी के विरोध में भाजपा के पूर्व सांसद बी.पी. सिंघल ने सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिका दायर की थी, जिस पर मई 2010 में अदालत की संविधान पीठ ने कुछ दिशा-निर्देश जारी किये थे। यह मामला जुलाई 2004 में 14वीं लोकसभा के गठन के बाद नवगठित केंद्र सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश, गुजरात, हरयिाणा और गोवा के राज्यपालों को हटाए जाने को लेकर था।

- इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करते हुए कुछ बाध्यकारी सिद्धांत प्रतिपादित किये।
- कोर्ट ने स्पष्ट किया कि राष्ट्रपति (व्यवहार में केंद्र सरकार) को यह शक्ति प्राप्त है कि वह किसी राज्य के राज्यपाल को किसी भी समय उसे कोई कारण बताए बिना और उसे अपना पक्ष रखने का अवसर दिये बिना भी पद से हटा सकते हैं।
- लेकिन इस शक्ति का प्रयोग मनमाने, अनुचित या अतार्किक ढंग से या दुर्भावनावश नहीं किया जा सकता।
- इसके बजाय राज्यपालों को हटाने की शक्ति का प्रयोग दुर्लभ एवं आपवादिक परिस्थितियों में और तर्कसंगत एवं उचित कारणों के होने पर ही किया जाना चाहिये।
- केवल यह कहना कि कोई राज्यपाल केंद्र सरकार की नीतियों एवं विचारधारा से भिन्न मत का है, या केंद्र सरकार ने उस राज्यपाल पर अपना विश्वास खो दिया है, उसे हटाए जाने का पर्याप्त कारण नहीं हो सकता।
- ऐसे में, केंद्र में सरकार का बदल जाना किसी राज्यपाल को हटाए जाने और फिर उसके स्थान पर अधिक अनुकूल व्यक्ति को नियुक्त करने का आधार नहीं हो सकता।
- किसी राज्यपाल को हटाए जाने के निर्णय को न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है।

विभिन्न आयोगों तथा समितियों की सिफारिशें

राज्यपाल को लेकर तीन महत्त्वपूर्ण आयोगों की प्रमुख सिफारिशें निम्नानुसार हैं:

सरकारिया आयोग (1988)

- इसने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की थी कि राज्यपालों को उनके 5 साल का कार्यकाल पूरा करने से पहले, दुर्लभ एवं आपवादिक मामलों को छोड़कर, बिल्कुल भी नहीं हटाया जाना चाहिये।
- ऐसा होने से राज्यपालों को उनके कार्यकाल के प्रति असुरक्षा की चिंता नहीं रहेगी और वे अपने पद के कर्त्तव्यों का पालन पक्षपातरहित होकर कर सकेंगे।
- आयोग के अनुसार यदि किसी राज्यपाल को हटाए जाने की आपवादिक परिस्थिति उत्पन्न होती भी है तो उसे अपना पक्ष रखने और अपने कृत्यों की व्याख्या करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिये।
- केंद्र सरकार को राज्यपाल के पक्ष पर उचित ध्यान देना चाहिये तथा उसे हटाए जाने के कारणों/ आधार से अवगत कराया जाना चाहिये।
- राज्यपाल का चयन राजनीति में सक्रिय व्यक्तियों में से नहीं होना चाहिये, कम-से-कम वह केंद्र में सत्तारूढ़ दल का व्यक्ति तो कदापि नहीं होना चाहिये।
- राज्यपालों का चयन केंद्र सरकार नहीं बल्कि एक 'स्वतंत्र समिति' करे, जिसमें प्रधानमंत्री के अलावा लोकसभा अध्यक्ष, उपराष्ट्रपति और संबद्ध राज्य के मुख्यमंत्री को भी होना चाहिये।
- पद छोड़ने के बाद उसकी नियुक्ति लाभ के किसी पद पर नहीं होनी चाहिये।
- सरकारिया आयोग का यह भी कहना था कि संविधान निर्माताओं ने राज्यपाल को केंद्र के प्रतिनिधि के रूप में नहीं बल्कि संघीय व्यवस्था के एक महत्त्वपूर्ण सेतु के रूप में देखा था।

वेंकटचेलैया आयोग (2002)

- इस आयोग ने भी सिफारिश की थी कि सामान्यत: राज्यपालों को 5 साल का कार्यकाल पूरा करने दिया जाना चाहिये।
- यदि उन्हें 5 साल से पहले हटाने की आवश्यकता भी हो तो केंद्र सरकार को एसा केवल उस राज्य के मुख्यमंत्री की सलाह के बाद ही करना चाहिये।

पुंछी आयोग (2010)

- इस आयोग ने सुझाव दिया कि 'राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत' वाक्यांश को संविधान से हटा दिया जाना चाहिये।
- किसी राज्यपाल को केंद्र सरकार की मर्जी से नहीं हटाया जाना चाहिये।
- इसके बजाय उसे केवल राज्य के विधानमंडल के प्रस्ताव से ही हटाया जाना चाहिये।

चूँकि इन सभी आयोगों की उपरोक्त सिफारिशों को संसद द्वारा कभी कानूनी या संवैधानिक रूप नहीं दिया गया, इसलिये ये केंद्र सरकार पर बाध्यकारी नहीं हैं।

राज्यपाल को लेकर सुप्रीम कोर्ट के कुछ महत्त्वपूर्ण जजमेंट

हालिया कर्नाटक विधानसभा चुनाव के बाद राज्यपाल की भूमिका के अलावा पूर्व में भी सुप्रीम कई ऐसे निर्देश जारी कर चुका है। अपने इन निर्णयों में सुप्रीम कोर्ट ने राज्यपाल की भूमिका के संबंध में जो महत्त्वपूर्ण मुद्दे उठाए उनमें यह परामर्श भी शामिल है कि राज्यपाल को राजनीतिक पार्टियों के आंतरिक मतभेद और असंतोष से स्वयं को दूर रखना चाहिये।

बोम्मई जजमेंट

सर्वोच्च न्यायालय के कई ऐसे फैसले हैं, जिनका समाज और राजनीति पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इन्हीं में से एक है 11 मार्च, 1994 को दिया गया राज्यों में सरकारें भंग करने की केंद्र सरकार की शक्ति को कम करने वाला ऐतिहासिक बोम्मई जजमेंट।

- सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय ने केंद्र सरकार द्वारा अनुच्छेद 356 के व्यापक दुरुपयोग पर विराम लगा दिया।
- धारा 356 के गलत इस्तेमाल को रोकने के लिये दिये गए इस फैसले को ही बोम्मई जजमेंट के नाम से जाना जाता है।
- कर्नाटक के मुख्यमंत्री एस.आर. बोम्मई के फोन टैपिंग मामले में फँसने के बाद तत्कालीन राज्यपाल ने उनकी सरकार को बर्खास्त कर दिया था, जिसके बाद यह मामला सर्वोच्च न्यायालय में पहुँचा था।
- नज़ीर माने जाने वाले इस फैसले में न्यायालय ने कहा, 'किसी भी राज्य सरकार के बहुमत का फैसला राजभवन की जगह विधानमंडल में होना चाहिये। राष्ट्रपति शासन लगाने से पहले राज्य सरकार को शक्ति परीक्षण का मौका देना होगा।'
- इस मामले में 9-सदस्यीय संविधान पीठ ने राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने के संदर्भ में दिशा-निर्देश तय किये।
- यह निर्णय भारत के लोकतांत्रिक इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने यह तय कर दिया कि बहुमत होने-न होने का फैसला सदन में होना चाहिये, कहीं और नहीं।
- बोम्मई जजमेंट का असर तब देखने को मिला था जब 1997 और 1998 में तत्कालीन राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने धारा 356 के इस्तेमाल से उत्तर प्रदेश और बिहार की सरकारों को बर्खास्त करने के केंद्र के प्रस्ताव को वापस भेज दिया था।
- बोम्मई जजमेंट के बाद विधानसभाओं को भंग करने का सिलसिला तो लगभग खत्म हो चुका है, लेकिन राज्यपालों के माध्यम से अपनी पसंद की सरकार बनवाने का प्रयास केंद्र की तरफ से जारी है।

रामेश्वर प्रसाद मामला

कर्नाटक को लेकर सर्वोच्च न्यायालय में दायर याचिका में कहा गया है कि बहुमत होने के बावजूद कुमार स्वामी को सरकार नहीं बनाने दी गई।

- याचिका में सर्वोच्च न्यायालय के कई फैसलों का हवाला दिया गया, विशेषकर 2006 में दिये गए रामेश्वर प्रसाद मामले का, जिसमें स्पष्ट कहा गया है

कि राज्यपाल पर उस पार्टी को आमंत्रित करने की ज़िम्मेदारी है जो स्थिर और टिकाऊ सरकार प्रदान कर सकती है। इसमें चुनाव-पूर्व हुए गठबंधन के अलावा चुनाव-पश्चात् हुए गठबंधन पर भी विचार किया जा सकता है।

विदित हो कि रामेश्वर प्रसाद मामले में बिहार के तत्कालीन राज्यपाल बूटा सिंह ने 2005 में चुनाव-पूर्व सबसे बड़े गठबंधन को सरकार बनाने के लिये नहीं कहा था और इस आधार पर राष्ट्रपति शासन लगाने की सिफारिश की थी कि किसी भी दल को बहुमत न मिलने के कारण सरकार गठन के लिये विधायकों की खरीद-फरोख्त होने की संभावना है। सर्वोच्च न्यायालय ने राज्यपाल के इस फैसले को असंवैधानिक ठहराया था।

विपक्षी दलों ने गोवा, मेघालय और मणिपुर में राज्यपालों के 'विवेक' पर लिये गए फैसले के आधार पर कर्नाटक का फैसला लेने की बात कही थी कि इन राज्यों में जो राज्यपाल के संवैधानिक अधिकार थे वही कर्नाटक में भी लागू होना चाहिये। उल्लेखनीय है कि इससे पहले गोवा के मसले पर भी सर्वोच्च न्यायालय ने मनोहर पर्रिकर के शपथ ग्रहण पर रोक लगाने से इनकार कर दिया था, लेकिन विश्वास मत प्राप्त करने की समय सीमा 15 दिनों से घटाकर 48 घंटे कर दी थी।

हरगोविंद पंत मामला

- राज्यपाल रघुकुल तिलक बनाम हरगोविंद पंत मामले पर 1979 में एक व्याख्या सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा दी गई थी, जिसके अनुसार राज्यपाल का पद भारत सरकार के अधीन नहीं है और उस पर भारत सरकार के निर्देश लागू नहीं होते।
- वह राज्य का संवैधानिक प्रमुख है, जिसमें सारी कार्यपालिका शक्तियाँ निहित हैं और बिना उसकी सहमति के विधायी शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकता।
- राज्यपाल का पद एक संवैधानिक पद है और उसका दायित्व संविधान में ही उल्लिखित है और उसे निभाने में वह किसी का प्रतिनिधि नहीं है।
- राष्ट्रपति उसे नियुक्त अवश्य करते हैं, पर वह नियुक्ति का एक तरीका है। वह राष्ट्रपति को राज्य की स्थिति से अवगत कराता है।
- राज्यपाल को कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता, क्योंकि वह अपने विवेक से कार्य करता है और यह पूर्ण रूप से स्वतंत्र पद है।

(टीम दृष्टि इनपुट)

निष्कर्ष: संघीय व्यवस्था में राज्य-कार्यपालिका के औपचारिक प्रमुख के रूप में राज्यपाल काम करता है, लेकिन कुछ लोग मानते हैं कि राज्यपाल का काम विशाल राजभवन में रहना, विधानसभा और सम्मेलनों को कभी-कभार संबोधित करना, परेडों का मुआयना करना, राज्य के अतिथियों के साथ दावतों में शामिल होना और सरकारी दस्तावेज़ों पर हस्ताक्षर करना मात्र है। लेकिन गठबंधन सरकारों के इस दौर में यह एक ऐसी संस्था है, जो हमारी संघीय व्यवस्था के लिये महत्त्वपूर्ण है।

हाल में गोवा, मेघालय और मणिपुर में राज्यपालों ने सबसे बड़ी पार्टी के बजाय चुनाव बाद बने गठबंधनों को ही सत्ता सौंपी थी। अब कर्नाटक में वह परंपरा अचानक बदल दिये जाने की कोई वजह नहीं बनती थी, लेकिन इस सबके पीछे असल कारण यह है कि कोई स्पष्ट संवैधानिक व्यवस्था इस बारे में अभी तक बनाई नहीं जा सकी है। खंडित जनादेश की जटिलता राज्यपालों को लगातार कठघरे में खड़ा कर रही है। कर्नाटक के राज्यपाल के फैसले को लेकर भाजपा का तर्क था कि राज्यपाल ने जनादेश का सम्मान करते हुए अपने विवेक का इस्तेमाल किया, लेकिन विपक्ष का कहना था कि उन्होंने केंद्र के एजेंट की तरह काम किया। अब यहाँ कौन सही है और कौन गलत, यह व्याख्या सुप्रीम कोर्ट ही कर सकता है। 1994 में जिस तरह कर्नाटक के ही बोम्मई केस में उसने फैसला दिया था कि बहुमत का फैसला सदन में ही हो सकता है, राजभवन में नहीं, उसी तरह उसे यह भी तय कर देना चाहिये कि राज्यपाल द्वारा किसी को मुख्यमंत्री बनाने का फैसला किस आधार पर लिया जाए।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/karnataka-election